

योग: एक उच्चस्तरीय मनोविज्ञान

□ डॉ. अरुण कुमार साव*

शोध सारांश

वर्तमान समय में मनुष्य ने अनगिनत मनोकायिक समस्याओं के साथ प्रवेश किया है। विज्ञान ने मनुष्य के जीवन में साधन-सुविधाओं की भरमार करने के साथ अनेकों मनोकायिक संकट भी खड़े किए हैं। मनुष्य का जीवन पहले के अपेक्षा अधिक तनाव-अवसाद ग्रस्त हुआ है। आधुनिक चिकित्सा की प्रचलित विधियों, मनोविश्लेषण के तौर तरीके मिल-जुलकर भी इस चुनौती का सामना करने में सक्षम नहीं हैं। दुनिया के प्रायः सभी क्षेत्र के विशेषज्ञों, विद्वान, चिंतक, दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, चिकित्सक आदि इन समस्याओं के समाधान खोजने में असक्षम रहे हैं। ऐसे में चिन्तित विशेषज्ञों ने विश्व भर के पुरातन ज्ञान भण्डार में अपनी ढूँढ-खोज प्रारंभ की है। और उनकी दृष्टि भारत देश के प्राचीन ऋषियों द्वारा अन्वेषित योग विज्ञान पर जा टिकी है। यहीं उन्हें आज की मनोकायिक समस्याओं के सार्थक और सक्षम समाधान अंकुरित होते हुए दिखाई पड़ रहे हैं। अपने मनोजैविक परिसीमा से परे योग विज्ञान व्यक्तित्व के समग्र विकास का विधान है। वर्तमान समय में मनोचिकित्सक जो अपने को आध्यात्मिक मनोचिकित्सक कहलाना पसन्द कर रहे हैं, का मानना है कि जहाँ पर आधुनिक मनोविज्ञान की सीमा समाप्त होती है, वहाँ से योग विज्ञान का आरंभ होता है। अतः योग को परामनोविज्ञान या उच्चस्तरीय मनोविज्ञान या आध्यात्मिक मनोविज्ञान कहना अतिसंयोजित नहीं होगी।

Keywords : मनोकायिक, मनोविश्लेषण, योगविज्ञान, व्यक्तित्व, मनोचिकित्सक, आध्यात्मिक मनोचिकित्सक, परामनोविज्ञान, आध्यात्मिक मनोविज्ञान।

आधुनिकता की इस दौड़ में मानवीय जीवन मूल्यों का स्तर बहुत नीचे गिरा है जिसके फलस्वरूप उसके व्यक्तित्व विकास की प्रक्रिया अवरुद्ध सी पड़ गई है एवं मानवीय व्यक्तित्व इस युग की भोगवादी आँधी में छिन्न-भिन्न हो गया है तथा उसके आंतरिक विघटन की स्थिति बहुत गंभीर बनी हुई है। समाज एवं वातावरण में व्याप्त अराजकता, आतंक एवं अशांति का साया इसी आंतरिक टुटन, सड़न एवं आक्रोश की बाह्य अभिव्यक्तियाँ मात्र है। युद्धोन्माद, आतंकवाद, जाति एवं साम्प्रदायिक हिंसा, भ्रष्टाचार, बलात्कार, आत्महत्या जैसी गंभीर सामाजिक समस्याएँ मानवीय व्यक्तित्व के आंतरिक विघटन की ही बाह्य प्रतिकृतियाँ कही जा सकती हैं।

बढ़ते मनोरोगों की आँधी एवं विकार की बाढ़ युग की गंभीर समस्या बन गई है। वस्तुतः हम मानवीय चेतना के गंभीर संकट से गुजर रहे हैं। न्यूरोसिस, साइकोसिस, सिजोफ्रेनिया जैसे बिखराव एवं विखण्डन के परिचायक शब्द आज प्रचलित मुहावरे बन गये हैं। एक सर्वेक्षण के अनुसार 40 से 90 प्रतिशत बीमारियाँ मानवीय चेतना के आंतरिक टुटन एवं विघटन का ही परिणाम है।

इस भौतिकवादी सभ्यता ने प्रकृति पर विजय पाने का अहंकार दिया, भोगवादी संस्कृति दी, सभी मानवीय संबंधों, जीवन

मूल्यों का बाजारीकरण कर दिया काम-वासना, लोभ-मोह जैसे विकारों को सुलगा कर मानवीय अस्तित्व को महाविनाश के कगार पर पहुँचा दिया है।

आज के भोगवादी सभ्यता की देन आधुनिक जीवन शैली ने जहाँ मानवीय जीवन को चौतरफा क्षति पहुँचायी है जिसमें जीवन का सुख चैन, प्रसन्नता, सब कुछ समाहित हो गई है एवं अनेक प्रकार की मानसिक एवं शारीरिक समस्याएँ काल के रूप में प्रकट हो रही हैं। अस्त-व्यस्त जीवनचर्या के कारण तनाव, चिन्ता, निराशा, आत्महीनता के साथ विभिन्न मनोकायिक विकृतियाँ जैसे- हृदय रोग, उच्च रक्तचाप, अस्थमा, मधुमेह एवं कैंसर जैसी खतरनाक बीमारियाँ मानव समुदाय को प्रभावित कर रही है। चारों तरफ फैली आधुनिक चिकित्सकीय भ्रान्ति के मध्य अक्षम स्वास्थ्य संतुष्टि चिन्ता का विषय बना रहा क्योंकि इसका कारण भावनात्मक असंतुलन है जिसे भर्तृहरि ने भी स्वीकार किया है कि तृष्णा एवं भोग जीवन को अस्वस्थ बनाता है यथा – तृष्णा न जीर्णा वमेयव जीर्णाः। भोगान भुक्ता वमेयव भुक्ताः।।

अगर इन सारी समस्याओं के मूल में दृष्टिपात किया जाय तो एक ही कारण समझ में आता है कि अपनी पुरातन भारतीय जीवनशैली-जिसमें भोग और त्याग, धर्म और अर्थ, प्रेय और श्रेय,

*सहायक प्राध्यापक, योग शिक्षा विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)

अभ्युदय और निःश्रेयस, भौतिकता और आध्यात्मिकता का संतुलित समन्वय ही जीवन का आदर्श माना जाता है, को छोड़ कर व्यक्ति आधुनिक जीवन शैली की चकाचौंध में अविवेक का अवलंबन लेकर नरकीटक एवं नरपशु का अमानवीय जीवन जी रहा है।³

आधुनिक जीवन में उत्पन्न हुई अनेकानेक शारीरिक, मानसिक एवं मनोकायिक समस्याओं का आज के विज्ञान के पास कोई सटिक उपाय नहीं है। विज्ञान के पास चिकित्सा की जो पद्धतियाँ आज प्रचलित एवं सुलभ हैं, वे अत्यन्त अधूरी, एकांगी एवं प्राणघातक हैं। कहने की आवश्यकता नहीं कि सारे विश्व में एक नींद, तनाव की दवा 'थेलिडोमाइड ट्रेजेडी' अपने प्राणघातक प्रभाव विकलांग बच्चों के जन्म के रूप में सारे विश्व में विख्यात हुई थी।⁴

इस तथ्य में कोई अतिसंयोजित नहीं है कि आधुनिक चिकित्सा पद्धति ने अनेकों क्षेत्रों में क्रांति की किन्तु इनके द्वारा हुए कुप्रभावों को भी नहीं नकारा जा सकता है, जिसका कारण आज के चिकित्सा पद्धति का एक पक्षीय चिकित्सा सिद्धांत है। जिसमें वह शरीर को ही सब कुछ मानता है उसने चेतना जैसे मानवीय अस्तित्व के मूलाधार की अवहेलना की। संभवतः उसे समझ ही न पाया। मानवीय मन के मर्मज्ञों के अनुसार अनेक स्थूल रोगों की जड़ सूक्ष्म मन में पलती है। प्रसिद्ध मनोविज्ञानी हेक ड्यूक ने अपनी कृति 'माइण्ड एण्ड हेल्थ' में शरीर पर पड़ने वाले मानसिक प्रभावों का विस्तृत वर्णन किया है। उनका निष्कर्ष है कि काया पर सर्वाधिक प्रभाव व्यक्ति की अपनी मनःस्थिति का पड़ता है। यह प्रभाव नाड़ी संस्थान पर 36, अंतः स्रावी ग्रंथियों पर 56 एवं मांसपेशियों पर 8 प्रतिशत पाया जाता है।⁵

मानवीय अस्तित्व के संकट के इस दौर में इनके उपचार के प्रयास न हो रहे हों, ऐसी बात नहीं है। दार्शनिक, धार्मिक, वैज्ञानिक एवं मनोवैज्ञानिक हर स्तर पर कुछ न कुछ प्रयास चल रहे हैं, किन्तु इनकी परिसीमाएँ स्पष्ट हैं। दार्शनिक प्रयास प्रमुखतया बौद्धिक उफहापोह तक सीमित है, इनकी व्यवहारिक उपयोगिता संदिग्ध ही बनी है। धार्मिक प्रयासों की सीमा उनकी रुढ़िवादिता, हठधर्मिता, पूर्वाग्रहों एवं अवैज्ञानिकता के कारण एक छोटे दायरे में सिमट जाती हैं। जबकि मनोविज्ञान अहं के इर्द गिर्द ही चक्कर लगाता रहता है। वैज्ञानिक प्रयास जैविक हेर-फेर जैसे जीन परिवर्तन, क्लोनिंग आदि तक सीमित होने के कारण अभी सतहों में ही भटक रहे हैं, जबकि मानवीय व्यक्तित्व मात्र जैविक रसायनों का संगठन भर नहीं है, इसकी अपनी मनोवैज्ञानिक एवं उससे उच्चस्तर आध्यात्मिक सत्ता भी है।

आचार्य पं. श्रीराम शर्मा के शब्दों में मानवी सत्ता दो हिस्सों में बँटी हुई है। एक—शरीर, पदार्थ और दूसरी—चेतना, मन, बुद्धि, अंतस्। आवश्यकता इन दोनों को पूर्णतया विकसित करने की है।⁶ किसी एक को उपेक्षित छोड़ देने पर विकास के स्थान पर

समस्याएँ ही जन्म लेंगी। क्योंकि समग्र दृष्टि का अभाव एवं एकांगी प्रयत्नों के कारण ही अनेकानेक समस्याओं का जन्म होता है तथा वे संकट का कारण बनती हैं। संतुलित एवं सुव्यवस्थित विकास क्रम के लिए उन सभी पक्षों का समावेश करना होता है जो शारीरिक मानसिक एवं आत्मिक प्रगति के लिए जरूरी हों।⁷

हालांकि आधुनिक मनोविज्ञान भी वर्तमान में एक विकसित चिकित्सा पद्धति के रूप में उभरा, परन्तु व्यक्तित्व विकास के महत्वपूर्ण प्रश्न पर आधुनिक मनोविज्ञान की मौलिक त्रुटी रही है और वह है — मानवीय चेतना की अधूरी समझ। इस संदर्भ में मधुसूदन रेड्डी का कहना है कि आधुनिक मनोविज्ञान अपने भौतिक एवं वैज्ञानिक आधार के कारण सतही मन के सतही मूल्यों से ही संबंध रखता है।⁸ महर्षि अरविन्द के शब्दों में चेतना को सामान्यतः मन का पर्याय मान लिया जाता है जबकि मानव चेतना (मन) मात्र मानवीय परिसीमा है जो चेतना के समस्त स्तरों का प्रतिनिधित्व नहीं करती है।⁹ इस तरह पश्चिमी मनोविज्ञान मानवीय मन, व्यवहार एवं व्यक्तित्व के सांगोपांग अध्ययन एवं आत्यंतिक उपचार एवं समग्र विकास का प्रश्न हो तो वहाँ चुप्पी साध लेता है। इसकी सबसे बड़ी भूल को बताते हुए शांति प्रकाश आत्रेय कहते हैं कि वह चेतना के आधार (आत्मा) को ही भूल गया है। अपनी इस भूल के कारण वह अपने लक्ष्य से दूर अन्ध्र पड़ चुका है। अतः चेतन सत्ता (अतिचेतन) का अध्ययन मनोविज्ञान का प्रतिपाद्य विषय होना चाहिए।¹⁰ इस प्रकार आधुनिक मनोविज्ञान अहं के गठन के इर्द-गिर्द ही व्यक्तित्व विकास का प्रयास करता है किन्तु व्यक्तित्व विकास की समग्र दृष्टि से इतना भर पर्याप्त नहीं। सुविख्यात मानस शास्त्री कार्लजुंग अहं की विकृति पर विचार करते हुए ठीक ही कहते हैं कि इसके कारण मानवीय चेतना समग्र से कटी हुई और अपनी आत्मा सहित मानवता से अपना सम्बंध खो बैठी है।¹¹

इस भोगवादी संस्कृति से उपजी अन्यान्य समस्याओं का वर्तमान विज्ञान के पास कोई सार्थक समाधान नहीं है। ऐसी स्थिति में प्रश्न उठता है कि क्या आधुनिक चिकित्सा पद्धति मानसिक और आध्यात्मिक स्तर तक का सफल उपचार कर सकेगा? क्योंकि ये स्तर अत्यंत सूक्ष्म एवं आत्यंतिक हैं। आधुनिक चिकित्सा पद्धति की असमर्थता को देखते हुए आवश्यकता है एक ऐसी चिकित्सा पद्धति की जो पूर्ण हो एवं जिससे संपूर्ण मानव समुदाय का चातुर्दिक उत्थान हो। गोरी व ऐलेन के अनुसार समस्त समाज आज तक एक समग्र चिकित्सा तंत्र की आवश्यकता महसूस कर रहा है।¹²

मानव चेतना की समग्रता को खोजने के लिए इन दिनों आधुनिक विज्ञान के साथ पश्चिमी मनोवैज्ञानिक भारतीय ज्ञान-विज्ञान एवं योग पद्धतियों की ओर काफी आकर्षित हुए हैं। जैसे इस बात का प्रमाण है कि कार्लजुंग (1933) ने इस संदर्भ में 'मार्डन मैन इन सर्च आफ ए सोल' नामक ग्रंथ की रचना की।¹³

इसी तरह जीन हार्डी (1997) 'साइकोलॉजी विथ ए सोल' को लिखने के लिए प्रेरित हुए।¹⁴ बुद्धि के साथ भावनाओं की उपयोगिता को स्वीकार करने का विचार डेनियल गोलमैन (1996) की रचना 'इमोशनल इन्टेलिजेन्स' में व्यक्त हुआ¹⁵ तथा दाना जौहर (1999) ने जीवन को समग्रता देने वाली आध्यात्मिक प्रतिभा के रूप में 'स्पीचुअल केपिटा' को प्रस्तुत किया है।¹⁶

वैदिक काल के आरंभ एवं आदि कालीन चिकित्सकीय उन्नति का परिणाम समेटे योग वशिष्ठ¹⁷ के इस सत्य को आज का संपूर्ण मनोचिकित्सक समुदाय भी स्वीकारने लगा है कि जिन्दगी की समस्याओं की जड़-इंसान के मन में होती हैं। रोग शारीरिक हो या मानसिक इसका मुख्य कारक अचेतन मन की परतों में छिपा होता है। आधुनिक मनोविज्ञान के अनुसार समस्त समस्याओं की जड़ अचेतन में दबी भावनाएँ होती हैं जो अनेकों रूपों में समय-समय पर प्रकट होती रहती हैं। योगी इसे चित्त कहते हैं जिसको ब्लैक बाक्स कहा जा सकता है। जिसमें हमारे वर्तमान जीवन की सभी इच्छाएँ, आकाक्षाएँ, आदत-संस्कार आदि समाहित रहते हैं। यही संस्कार हमारे भावी जीवन के सुख-दुखों का निर्धारण करते हैं।¹⁸ प्रख्यात मनोविद् लारेन्स हाइड के शब्दों में-मनोवैज्ञानिक विधियों की अपनी सीमाएँ हैं, जिनके द्वारा व्यक्तित्व के विकारों को एक सीमा तक ही ठीक किया जा सकता है, किन्तु उनका सर्वांगपूर्ण उपचार यहाँ संभव नहीं है।¹⁹ उनके अनुसार जीवन को आत्मकेन्द्रित बनाये बिना किसी भी तरह व्यक्तित्व तथा जीवन के बिखराव की पूर्ण समाप्ति नहीं हो सकती। वस्तुतः व्यक्तित्व को अखंडित बना सकना मानसिक स्तर से गहरे जाने पर ही संभव है, जहाँ आत्मिक सत्ता ही है। जब तक समूचा व्यक्तित्व इस केन्द्र से संचालित नहीं होता, तब तक इसकी समस्याओं के समाधान के लिए किए गए प्रयास वृक्ष की जड़ों को छोड़कर पत्तों को सींचने जैसे ही होंगे।

पोलैण्ड के 'थर्ड क्लीनिक आप मेडिकल' के डायरेक्टर प्रो. जूलियन का कहना है कि इन समस्त विकराल समस्याओं के समुचित, सटीक, समग्र एवं निरापद समाधान हेतु हमें पुनः वैदिक भारत की चिर पुरातन यौगिक प्रक्रियाओं का अनुसरण करना होगा। यहीं से उन्हें आज की सभी शारीरिक, मानसिक समस्याओं के सार्थक और सक्षम समाधान प्राप्त करना संभव हो सकता है। चूंकि योग सुपरचेतन (आत्मा) को व्यक्तित्व का आधार मानते हुए व्यक्तित्व के समग्र संगठन एवं विकास की ठोस पृष्ठ भूमि तैयार करता है। जीवन का उच्च ध्येय सुस्पष्ट आचार पद्धति एवं अचेतन (चित्त) के परिष्कार की सुव्यवस्थित प्रक्रिया द्वारा यह इस कार्य को प्रभावी ढंग से आगे बढ़ता है।

स्वामी यतीश्वरानन्द के शब्दों में इस तरह संगठित व्यक्तित्व में अहं की वैयक्तिक चेतना ब्रह्माण्डीय चेतना से लयबद्ध रहती है और यह संगठित चेतना मन और शरीर को सहज, सक्रिय एवं सामंजस्य ढंग से निर्देशित रखती है।²⁰ योग और

आधुनिक विज्ञान का तुलनात्मक अध्ययन करने वाली प्रख्यात विदुषी साधिका कोस्टर के शब्दों में योग पद्धति मानव जाति के लिए सार्वभौम रूप से सत्य है। और इसमें उपलब्ध सामग्री की हम असीम लाभ के साथ जाँच और प्रयोग कर सकते हैं। साथ ही यह दावा करती हैं कि योग मानसिक विकास की एक व्यवहारिक पद्धति है। मैं पूर्ण आश्वस्त हूँ कि महर्षि पतंजलि का योगसूत्र कुछ ऐसी सूचनाएँ रखता है।²¹ मानवीय मन के विशेषज्ञ कार्लरोजर्स ने इस क्षेत्र में बहुतायत शोध कार्य किये हैं, उनके अनुसार मानवीय स्वास्थ्य संकट के समाधान का समस्त विज्ञान योग शास्त्र में उपलब्ध है।²² इस संदर्भ में मधुसुदन रेड्डी का भी कहना है कि मानसिक स्वास्थ्य की दृष्टि से योग की पद्धतियाँ आधुनिक एवं प्रायोगिक हैं।²³

इस तरह वर्तमान भौतिकवादी, विश्व दृष्टिकोण, विज्ञान एवं तकनीकी पर अधिक पराश्रयता तथा योग विहिन जीवनशैली जहाँ व्यक्तित्व की महाव्याधियों का मूल कारण है, वहीं इनके उपचारार्थ इन सब में एक आमूल-चूल परिवर्तन अपेक्षित है। एक अधिक समग्र जीवनदृष्टि, एक स्वस्थ एवं संतुलित जीवन पद्धति की आवश्यकता है। इच्छा शक्ति का सम्यक विकास एवं भाव संतुलन, मस्तिष्क का समग्र विकास एक स्वस्थ, संतुलित, सामंजस्यपूर्ण जीवन के लिए अनिवार्य है और यही सब कुछ यौगिक जीवन हमें प्रदान करती है।²⁴

योग का क्रियात्मक पक्ष जहाँ शरीर व मन को नियंत्रित करता है, साइको-न्यूरो-इम्यून तंत्र में संतुलन स्थापित करता है, शरीर में जीवनी शक्ति (प्राण) को बढ़ाता है और मन को एकाग्र एवं शांत रखता है।²⁵ वहीं इसका सैद्धान्तिक पक्ष जीवन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण प्रदान करता है, जीवन के सार्थकता को प्रकट करता है तथा जीवन के चरम लक्ष्य (Ultimate Goal) के प्रति आश्वस्त करता है।²⁶

निष्कर्ष –

निष्कर्षतः योग साधना मानवीय चेतना का विज्ञान है, उच्चस्तरीय मनोविज्ञान है। जो हमारे जीवन के आंतरिक एवं बाह्य वातावरण के साथ सामंजस्य स्थापित करता है। मस्तिष्क की कार्य क्षमता को बढ़ाता है, शरीर व मन को विश्राम देता है तथा जीवन को आरोग्यता से उच्चतर चेतना की ओर अग्रसर करता है। इस प्रकार यौगिक जीवन हमें शारीरिक व मानसिक रूप से परिपूर्ण सुखी, सम्मुन्नत जीवन प्रदान करता है।

सन्दर्भ –

1. Pandya, P. (2003) Akhand Jyoti, April 2003, Akhand Jyoti Sansthan Mathura, Pp15.
2. गुप्ता, कृष्णा (2002) चेतना मानव अनुसंधान पत्रिका, भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान, शिमला, हिमाचल प्रदेश।
3. डॉ. शशिप्रभा (1996) वैदिक विमर्श, जे. पी. पब्लिकेशन हाऊस, दिल्ली पृ. 5

4. World Health Report (2003) Dainik Bhashkar 2003, 3rd October, Indaur, MP.
5. Pandya, P (2004) Ayurved Vikas, Dabar India Ltd. Gaziabad, Apr. 2004, Pp 25-26.
6. आचार्य, श्रीराम शर्मा (1984) आत्मविश्वास जगायें—सफलता पायें, अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा, अ. ज्यो. वर्ष 47, अंक 4, पृ. 50
7. श्रीमाली, मन्दाकिनी (2001) प्रज्ञापुरुष का समग्र दर्शन, अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा, पृ. 7.2
8. Reddy, M (1990) Integral Yoga Psychology Institute of Human Study, Shri Aurobindo Darshan Hyderabad, Pp 58.
9. Aurobindo, Shri (2003) Letters on Yoga, Shri Aurobindo Publication Pondicherry, Vol.22, Pp 234.
10. आत्रेय, शांति प्रकाश (1965) योग मनोविज्ञान, द इंटरनेशनल पब्लिकेशन, वाराणसी, पृ.341
11. Jung, CG (1933) Modern Man in Search of a Soul, San Diego Publishers New York – London, . Pp.141.
12. Gowri, A & Ellen, H (2001) American Family Physician, Spirituality & Medical Practice: Using the Hope Questions as a Practical Tool of Spiritual Assessment. American Academy of Family Physician.
13. Jung, CG (1933) Modern Man in Search of a Soul, San Diego Publishers New York - London.
14. Hardy Jean (1997) A Psychology with a Soul. Penguin Group 27, Wright lane London-8.
15. Golman Deniel (1996) Emotional Intelligence, Bloomsbury Publishing Plc 36 Square London.
16. Jauhar, D (1999) Spiritual Capita. Bloomsbury Publishing Plc 36 Square London.
17. ;ksx ofk"B 6@1@11@30
18. Weiss, Brain (2001) Through Time into Healing - How Past Time Life Regression Therapy can Heal Mind, Body and Soul, MacKay's of Chatham PLC, Chatham, Kent. Pp72.
19. Hyde Larences (1963) Isis and Orisis Pp.109.
20. Yatishwaranand, Swami (1979) Meditation & Spiritual Life, Shri Ramakrishna Ashram Bull Temple Road Bangalore.
21. Coster G (1974) Yoga and Western Psychology: A Comparison. Oxford University Press, London, Pp 245.
22. Sachdeva IP (1978) Yoga and Depth Psychology. Motilal Banarsidas, Bangalore Road, Jawahar Nagar, Delhi, Pp 7.
23. Reddy, M (1990) Integral Yoga Psychology Institute of Human Study, Shri Aurobindo Darshan Hyderabad, Pp35.
24. Nagendra, HR (2001) New Perfection in Stress Management, Swami Vivekanand Yoga Prakashan Bangalore, Pp1-3.
25. Lamb, T (2003) Health Benefits of Yoga, Yoga Research and Education Center, November 3, 2003.
26. Abhedananda, Swami (1999) The Yoga Psychology, Ramakrishana Vedanta Math, Calcutta.

